[2021] 2 उम. नि. प. 240

रोहतास और एक अन्य

बनाम

हरियाणा राज्य

तथा

बिजेन्द्र

बनाम

हरियाणा राज्य

[2011 की दांडिक अपील सं. 38 इसके साथ 2011 की दांडिक अपील सं. 775]

10 दिसम्बर, 2020

न्यायमूर्ति एन. वी. रमना, न्यायमूर्ति सूर्यकांत और न्यायमूर्ति अनिरुद्ध बोस

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 148, 307 और 34 – विधिविरुद्ध जमाव और हत्या का प्रयत्न – सात अभियुक्तों द्वारा घातक आयुधों से लैस होकर शिकायतकर्ता-क्षतिग्रस्त पर आक्रमण करके गंभीर क्षतियां कारित किया जाना – विधिविरुद्ध जमाव और हत्या के प्रयत्न के लिए दोषसिद्ध किया जाना – अपील में तीन अभियुक्तों को दोषमुक्त किया जाना और एक अभियुक्त की मृत्यु हो जाना – शेष तीन अभियुक्त-अपीलार्थियों को सामान्य आशय के आधार पर धारा 34 की सहायता से दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील – जहां एक जैसे साक्ष्य से विधिविरुद्ध जमाव और सामान्य आशय दोनों का निष्कर्ष निकलता हो तथा मामले के तथ्यों और परिस्थितियों और क्षतिग्रस्त को पहुंची क्षतियों के बारे में चिकित्सा विशेषज्ञों की यह राय हो कि उसे कारित की गई क्षतियां प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थीं तथा प्रत्यक्षदर्शी साक्षी का साक्ष्य भी विश्वसनीय पाया गया हो, वहां अभियुक्तों की दोषसिद्धि में हस्तक्षेप करना उचित नहीं होगा ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार है कि पीड़ित-रणवीर सिंह (अभि. सा. 1) द्वारा तारीख 26 जनवरी, 1998 को पुलिस के पास एक शिकायत यह कथन करते हुए दर्ज की गई थी कि दो दिन पहले जब वह अपने खेत में सिंचाई करने के लिए जा रहा था तो उसे रास्ते में रोहतास, संजय, बिजेन्द्र (वर्तमान तीन अपीलार्थियों) और ओम प्रकाश (जिसकी मृत्यु हो गई है) द्वारा रोका गया और उन्होंने सामूहिक रूप से उसे यह धमकी दी कि यदि वह सिंचाई के लिए अपने खेत में आया तो उसे जान से मार दिया जाएगा । अगले दिन अर्थात् 25 जनवरी, 1998 को जब शिकायतकर्ता अपने एक अन्य कृषि भूखंड पर जाने के लिए हुडावाला खेत से होकर गुजर रहा था तब चार अभियुक्तों ओम प्रकाश, रोहतास, संजय और बिजेन्द्र ने उसे पकड़ लिया । वे कुल्हाड़ियों का प्रयोग करके शिकायतकर्ता के शरीर पर प्रहार करने लगे और तद्द्वारा वह नीचे गिर गया तथा उसके पैरों, हाथ और सिर पर गंभीर क्षतियां कारित की गईं । तीन अभियुक्त व्यक्तियों का एक अन्य समूह, जिसमें हवा सिंह, विरेन्द्र **उर्फ** बीरो और राजिन्द्र सम्मिलित थे, भी शिकायतकर्ता की पिटाई करने के लिए सम्मिलित हो गया । हमलावरों ने यह भी घोषणा की कि वे शिकायतकर्ता को जान से मार देने तक चैन नहीं लेंगे । शिकायतकर्ता की चीख-पुकार सुनकर उसका भाई बलवान (अभि. सा. 3) जो निकटवर्ती बुढ़े वाला खेत की सिंचाई कर रहा था, घटनास्थल की ओर दौड़ा और शोर मचाया । उसके पश्चात्, सभी सातों अभियुक्त घटनास्थल से भाग गए । इसके पश्चात् बलवान अपने क्षतिग्रस्त भाई को उपचार के लिए राजकीय सिविल अस्पताल, सोनीपत लेकर गया । बहुविध क्षतियों की गंभीरता के कारण रणवीर को स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान संस्थान, रोहतक में रेफर कर दिया गया । अधिकारिता रखने वाली पुलिस ने तारीख 26 जनवरी, 1998 को स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान संस्थान, रोहतक में क्षतिग्रस्त का कथन अभिलिखित किया और भारतीय दंड संहिता की धारा 307, 323, 325, 506, 148 और 149 के अधीन औपचारिक रूप से प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की । इसके पश्चात् सभी सातों अभियुक्तों को गिरफ्तार किया गया । अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात् उन्हें विचारण के लिए सुपुर्द किया गया । अपर सेशन न्यायाधीश, सोनीपत ने दो आरोप विरचित किए ; पहला, धारा 148 के

अधीन घातक आयुध से बलवा करने और दूसरा, भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 307 के अधीन विधिविरुद्ध जमाव के भाग के रूप में सामान्य उद्देश्य के साथ हत्या करने का प्रयत्न करने का आरोप । सभी सातों अभियुक्तों ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का दावा किया । तथापि, विचारण के दौरान ओम प्रकाश की मृत्यु हो गई और तारीख 18 नवम्बर, 2000 को उसके विरुद्ध कार्यवाहियों का उपशमन हो गया । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश, सोनीपत ने पर्याप्त प्रत्यक्षदर्शी और चिकित्सीय साक्ष्य का विश्लेषण करने के पश्चात् यह पाया कि एक सामान्य उद्देश्य के साथ एक 'विधि-विरुद्ध जमाव' ने शिकायतकर्ता को गंभीर क्षतियां कारित की थीं । परिणामत:, सभी छह अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 307 के अधीन अपराध के लिए (सात वर्ष के कठोर कारावास के दंडादेश के साथ) और भारतीय दंड संहिता की धारा 148 के अधीन भी (एक वर्ष के अतिरिक्त समवर्ती कारावास के साथ) दोषसिद्ध किया । अपील में उच्च न्यायालय ने संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन किया और शिकायतकर्ता की इस स्वीकारोक्ति पर भी विचार किया कि तीन अभियुक्त अर्थात् राजिन्द्र, हवा सिंह और बीरो **उर्फ** विरेन्द्र घटनास्थल पर उसे अन्य अभियुक्तों द्वारा पहले ही क्षतियां कारित कर देने के पश्चात् पहुंचे थे । उच्च न्यायालय ने इस संभाव्यता को महसूस करते हुए कि बाद में पहुंचने वाले अभियुक्तों को केवल जाल में फंसाने और पुरानी रंजिश निकालने के लिए नामित किया गया हो सकता है, राजिन्द्र, हवा सिंह और बीरो **उर्फ** विरेन्द्र को संदेह का फायदा दिया और उन्हें सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया । जहां तक वर्तमान तीन अपीलार्थियों रोहतास, संजय और बिजेन्द्र का संबंध है, उच्च न्यायालय ने उनकी दोषसिद्धि में हस्तक्षेप करने के लिए कोई कारण नहीं पाया, यद्यपि, भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के आरोप के अधीन दंडादेश की मात्रा को सात वर्ष से कम करके पांच वर्ष कर दिया और पीड़ित-शिकायतकर्ता (अभि. सा. 1) को संदत्त किए जाने के लिए 1,00,000/- रुपए (एक लाख रुपए) का संयुक्त रूप से अतिरिक्त जुर्माना अधिरोपित किया । सिद्धदोष अभियुक्तों द्वारा उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपीलें की गईं । उच्चतम न्यायालय द्वारा

अपीलों को खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – इससे पूर्व कि 'विधिविरुद्ध जमाव' के सदस्यों को सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करते हुए कारित अपराध के लिए प्रतिनिधिक रूप से दोषी ठहराया जा सके, यह सिद्ध करना आवश्यक है कि पांच व्यक्तियों से अन्यून व्यक्तियों ने, जैसा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 141 के साथ पठित धारा 149 के अधीन आज्ञापक रूप से विहित किया गया है, वास्तव में घटना में भाग लिया था । प्रस्तुत तथ्यों की तरह, यह असामान्य बात नहीं है कि जब यद्यपि आरोप पत्रित करने के समय पर अभियुक्तों की संख्या पांच से अधिक है किंतु विचारण का अनुक्रम समाप्त होने पर उनमें से कुछ की दोषमुक्ति के कारण रोष अभियुक्तों की संख्या पांच से कम रह जाए । ऐसे मामलों में यह सही हो सकता है कि, जैसी कि अपीलार्थियों द्वारा ठीक ही आग्रह किया गया है, भारतीय दंड संहिता की धारा 148 और 149 के अधीन आरोप बना नहीं रहेगा । तथापि, इसका यह अर्थ नहीं है कि न्यायालय आरोप में परिवर्तन नहीं कर सकते हैं और भारतीय दंड संहिता की धारा 34 की सहायता (यदि सामान्य आशय है) नहीं ले सकते हैं या वे यह निर्धारित नहीं कर सकते हैं कि क्या अभियुक्त स्वतंत्र रूप से किसी विशिष्ट अपराध के संघटकों का समाधान करता है या नहीं । प्रस्तुत मामले के तथ्यों को ये स्थिर सिद्धांत लागू करते हुए, यह देखा जा सकता है कि उसी साक्ष्य से ही अर्थात् अभियुक्तों के आचरण से, जैसा कि क्षतिग्रस्त और प्रत्यक्षदर्शी साक्षी द्वारा वर्णन किया गया है, सामान्य उद्देश्य और सामान्य आशय दोनों होने का पता चलता है । इसके अतिरिक्त, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन किए गए कथन का परिशीलन करने पर यह दर्शित होता है कि अपीलार्थियों के समक्ष अभिव्यक्त रूप से अपराध में उनकी अपनी-अपनी विनिर्दिष्ट भूमिका का उल्लेख किया गया था ; यह कि उनमें से प्रत्येक ने क्षतिग्रस्त की हत्या करने के सामान्य आशय को अग्रसर करते हुए शिकायतकर्ता पर घातक आयुध से आक्रमण किया था । अत: यह न्यायालय यह नहीं पाता है कि अपीलार्थियों पर तब कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था जब उच्च न्यायालय ने उन तीनों को व्यक्तिगत रूप से हत्या का प्रयत्न करने के अपराध के

लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 149 की सहातया के बिना दोषी अभिनिर्धारित किया था । (पैरा 15, 16 और 23)

इस न्यायालय को कोई संदेह नहीं है कि तथ्यों के आधार पर तीनों अपीलार्थियों में से प्रत्येक के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध को स्पष्ट रूप से सिद्ध किया गया है । चिकित्सा विशेषज्ञों ने अपने अभिसाक्ष्यों में स्पष्ट रूप से यह कथन किया है कि प्रयुक्त किए गए आयुध और पहुंचाई गई क्षतियां प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थीं । अपीलार्थियों ने तारीख 24 जनवरी, 1998 को शिकायतकर्ता को जान से मारने की धमकी दी थी और फिर अगले ही दिन उन्होंने धारदार आयुधों का प्रयोग किया तथा यह भी घोषणा की थी कि वे शिकायतकर्ता को जान से मारने तक चैन नहीं लेंगे । इससे अपीलार्थियों का पूरी तरह से यह जानते हुए ऐसी क्षतियां पहुंचाने का आशय स्पष्ट होता है कि ऐसी क्षतियों से सामान्य तौर पर शिकायतकर्ता की मृत्यु हो जाएगी । रोहतास से की गई कुल्हाड़ी की बरामदगी, जो अभिलेख पर प्रदर्श पी-7 के रूप में है, से भी अपीलार्थियों द्वारा घटना कारित करने से इनकारी की बात कमजोर हो जाती है । क्षतियां गंभीर होने की बात संदेह के परे हैं । न केवल सात क्षतियां थीं, उनमें से कुछ तो सिर (कान के ऊपर) सहित शरीर के मार्मिक अंगों पर गहराई तक कटने की क्षतियां थी ; अपितु अपीलार्थियों ने शिकायकर्ता के पैरों की घुटने की नीचे की सभी हड्डियों तोड़ दी थीं । अत्यधिक विस्मयकारी बात तो यह है कि क्षतियों के कारण शिकायतकर्ता के ये संपूर्ण अंग काटने पड़े थे जिससे वह स्थायी रूप से निर्योग्य हो गया था । स्वयं इस बात से यह दर्शित होता है कि यदि अभि. सा. 3 द्वारा समय पर हस्तक्षेप न किया गया होता और स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान संस्थान, रोहतक द्वारा उचित चिकित्सा देख-रेख न की गई होती तो शिकायतकर्ता की मृत्यु होने की अत्यधिक संभावना थी । ऐसी अत्यधिक क्षतियों को देखते हुए, इस न्यायालय को ऐसा कोई कारण या वजह समझ नहीं आती कि या तो शिकायतकर्ता (अभि. सा. 1) या उसके भाई बलवान (अभि. सा. 3) द्वारा अपीलार्थियों

को मिथ्या रूप से फंसाया गया हो और वास्तविक अपराधियों को बचकर जाने दिया गया हो । इसके विपरीत, अभि. सा. 1 की स्पष्टवादिता और अभि. सा. 3 के उत्तर विश्वासोत्पादक हैं और इनसे घटना का असंदिग्ध स्पष्टीकरण उपलब्ध होता है । इसके अतिरिक्त, यहां तक कि भारतीय दंड संहिता की धारा 34 की अपेक्षाएं भी भली-भांति सिद्ध होती हैं क्योंकि आक्रमण स्पष्ट रूप से पूर्व-चिंतन करके किया गया था । घटना तत्क्षण घटित नहीं हुई थी । अपीलार्थियों ने पहले ही शिकायतकर्ता को यह धमकी दी थी कि यदि उसे अपने खेतों की सिंचाई करने का प्रयत्न किया तो उसे शारीरिक हानि पहुंचाई जाएगी । इस प्रकार तारीख 25 जनवरी, 1998 का उनका आक्रमण पूर्व-योजनाबद्ध और सुविचारित था । अभिलेख पर यह सुझाव देने के लिए कुछ नहीं है कि शिकायतकर्ता ने कोई प्रकोपन दिया था । क्षतिग्रस्त द्वारा और एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी द्वारा प्रत्येक अपीलार्थी द्वारा निभाई गई भूमिका के बारे में कथन किया है और अपराध में उनकी व्यक्तिगत सक्रिय भागीदारी को सिद्ध किया है । यह सही है कि अभियोजन पक्ष का कर्तव्य न्यायसंगत दोषसिद्धि की ईप्सा करना ही नहीं अपितु यह सुनिश्चित करना भी है कि न्याय किया जाए । अत: अभियोजन पक्ष को अवश्य अन्वेषण के अनुक्रम में एकत्रित सर्वोत्तम साक्ष्य प्रस्तुत करना चाहिए । यद्यपि सदैव आदर्श बात यह है कि अभियोजन के पक्षकथन को सिद्ध करने के लिए स्वतंत्र साक्षियों को आगे आना चाहिए किंतु प्रत्येक मामले में घटना के समय पर पर-व्यक्तियों की मौजूदगी की प्रत्याशा करना अनुचित होगा । क्योंकि अधिकांश हिंसात्मक अपराध यदा-कदा पूर्वानुमानित होते हैं । अत:, स्वतंत्र साक्षियों की परीक्षा न कराने के विरुद्ध निकाले गए किसी प्रतिकूल निष्कर्ष का निर्धारण प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर किए जाने की आवश्यकता है । वास्तव में, पहले अवश्य यह अवधारित किया जाना चाहिए कि क्या अभियोजन पक्ष द्वारा सर्वोत्तम साक्ष्य को, यद्यपि उपलब्ध था, अस्पष्ट या अस्पष्टीकृत कारणों से वास्तव में विधारित कर लिया गया था । (पैरा 24, 25, 26 और 27)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2020]	(2020) एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 60 = ए. आई. आर. 2020 एस. सी. 753 : **नल्लपा रेड्डी श्रीधर रेड्डी** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** ;	16
[2003]	(2003) 2 एस. सी. सी. 266 : **चित्तरमल** बनाम **राजस्थान राज्य** ;	20
[2002]	(2002) 7 एस. सी. सी. 117 : **नल्लाबोथु वेंकय्या** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** ;	21
[2002]	(2002) 6 एस. सी. सी. 506 : **धूपा चमार** बनाम **बिहार राज्य** ;	12
[1997]	(1997) 7 एस. सी. सी. 41 : **आत्माराम जिंगाराजी** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	20
[1993]	(1993) 3 एस. सी. सी. 32 : **सुबर्ण** बनाम **केरल राज्य** ;	12,17
[1991]	(1991) 1 एस. सी. सी. 212 : **कुमारी श्रीलेखा विद्यार्थी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	27
[1987]	(1987) 1 एस. सी. सी. 679 : **अमर सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** ;	12,18
[1969]	(1969) 3 एस. सी. सी. 166 : **कांतिलाल चंदू लाल मेहता** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	16
[1956]	ए. आई. आर. 1956 एस. सी. 116 : **विल्ली (विलियम) स्लाने** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	20
[1954]	ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 204 : **करनैल सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** ;	19
[1945]	ए. आई. आर. 1945 प्रिवी कौंसिल 118 : **महबूब शाह** बनाम **किंग एम्परर** ।	22

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2011 की दांडिक अपील सं. 38. (इसके साथ 2011 की दांडिक अपील सं. 775)

पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के तारीख 15 मार्च, 2010 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री ऋषि मल्होत्रा

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री बी. के. सतीजा, अपर महाधिवक्ता, हरियाणा और डा. मोनिका गुसैन

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति सूर्यकांत ने दिया ।

न्या. सूर्यकांत – ये दो दांडिक अपीलें, जिन्हें वीडियो कांफ्रेंसिंग के माध्यम से सुना गया, पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के तारीख 15 मार्च, 2010 के उस निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई हैं जिसके द्वारा रोहतास और संजय (2011 की दांडिक अपील सं. 38 में अपीलार्थी) और बिजेन्द्र (2011 की दांडिक अपील सं. 775 में अपीलार्थी) की भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे इसमें आगे भारतीय दंड संहिता कहा गया है) की धारा 307 और 148 के अधीन दोषसिद्धि को कामय रखा गया था, यद्यपि अपर सेशन न्यायाधीश, सोनीपत द्वारा दिए गए सात वर्ष के कठोर कारावास के दंडादेश को कम करके पांच वर्ष कर दिया गया था और पीड़ित शिकायतकर्ता को प्रतिकर के रूप में संदेय 1,00,000/- रुपए (एक लाख रुपए) का जुर्माना अधिरोपित किया गया था ।

तथ्य

2. अभियोजन के पक्षकथन के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं । पीड़ित-रणवीर सिंह (अभि. सा. 1) द्वारा तारीख 26 जनवरी, 1998 को पुलिस के पास एक शिकायत यह कथन करते हुए दर्ज की गई थी कि दो दिन पहले जब वह अपने खेत में सिंचाई करने के लिए जा रहा था तो उसे रास्ते में रोहतास, संजय, बिजेन्द्र (वर्तमान तीन अपीलार्थियों) और ओम प्रकाश (जिसकी मृत्यु हो गई है) द्वारा रोका गया और उन्होंने

सामूहिक रूप से उसे यह धमकी दी कि यदि वह सिंचाई के लिए अपने खेत में आया तो उसे जान से मार दिया जाएगा । शिकायतकर्ता अपने घर वापस आया और अपने परिवार के सदस्यों को घटना का वर्णन किया, जिन्होंने उसे झगड़ा करने से बचने के लिए सचेत करते हुए अपने सामान्य काम-काज पर जाने के लिए कहा । अगले दिन अर्थात् 25 जनवरी, 1998 को जब शिकायतकर्ता अपने एक अन्य कृषि भूखंड (जिसे पट्टेवाला खेत के रूप में जाना जाता है) पर जाने के लिए हुडावाला खेत से होकर गुजर रहा था तब चार अभियुक्तों ओम प्रकाश, रोहतास, संजय और बिजेन्द्र ने उसे पकड़ लिया । वे कुल्हाड़ियों का प्रयोग करके शिकायतकर्ता के शरीर पर प्रहार करने लगे और तद्द्वारा वह नीचे गिर गया तथा उसके पैरों, हाथ और सिर पर गंभीर क्षतियां कारित की गईं । तीन अभियुक्त व्यक्तियों का एक अन्य समूह, जिसमें हवा सिंह, विरेन्द्र **उर्फ** बीरो और राजिन्द्र सम्मिलित थे, भी शिकायतकर्ता की पिटाई करने के लिए सम्मिलित हो गया । हमलावरों ने यह भी घोषणा की कि वे शिकायतकर्ता को जान से मार देने तक चैन नहीं लेंगे । शिकायतकर्ता की चीख-पुकार सुनकर उसका भाई बलवान (अभि. सा. 3) जो निकटवर्ती बुढ़े वाला खेत की सिंचाई कर रहा था, घटनास्थल की ओर दौड़ा और शोर मचाया । उसके पश्चात्, सभी सातों अभियुक्त घटनास्थल से भाग गए । इसके पश्चात् बलवान अपने क्षतिग्रस्त भाई को उपचार के लिए राजकीय सिविल अस्पताल, सोनीपत लेकर गया । बहुविध क्षतियों की गंभीरता के कारण रणवीर को स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान संस्थान, रोहतक में रेफर कर दिया गया ।

3. अधिकारिता रखने वाली पुलिस ने तारीख 26 जनवरी, 1998 को स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान संस्थान, रोहतक में क्षतिग्रस्त का कथन अभिलिखित किया और भारतीय दंड संहिता की धारा 307, 323, 325, 506, 148 और 149 के अधीन औपचारिक रूप से प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की । इसके पश्चात् सभी सातों अभियुक्तें को गिरफ्तार किया गया । अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात् उन्हें विचारण के लिए सुपुर्द किया गया । अपर सेशन न्यायाधीश, सोनीपत ने दो आरोप विरचित किए ; पहला, धारा 148 के अधीन घातक आयुध से बलवा करने और

दूसरा, भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 307 के अधीन विधिविरुद्ध जमाव के भाग के रूप में सामान्य उद्देश्य के साथ हत्या करने का प्रयत्न करने का आरोप । सभी सातों अभियुक्तों ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का दावा किया । तथापि, विचारण के दौरान ओम प्रकाश की मृत्यु हो गई और तारीख 18 नवम्बर, 2000 को उसके विरुद्ध कार्यवाहियों का उपशमन हो गया ।

4. अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तों की दोषिता को सिद्ध करने के लिए बारह साक्षियों की परीक्षा की, जिनमें पीड़ित-शिकायतकर्ता रणबीर सिंह (अभि. सा. 1) और उसका भाई तथा एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी बलवान (अभि. सा. 3) सम्मिलित थे । शिकायतकर्ता ने बहुत प्रभावशाली रूप से अपने पूर्ववर्ती बयान की संपुष्टि की । वह प्रतिपरीक्षा के दौरान अडिग रहा और स्पष्ट रूप से यह कथन किया "ओम प्रकाश, रोहतास, संजय और बिजेन्द्र तथा एक मिनट के पश्चात् बीरो, हवा सिंह और राजिन्द्र वहां आए । सभी अभियुक्तों ने अपने-अपने आयुधों से मुझ पर आक्रमण किया ।" उसने यह भी उल्लेख किया कि "ओम प्रकाश ने मेरे सिर पर कुल्हाड़ी से दो प्रहार किए जबकि रोहतास ने मेरी दाईं टांग पर अनगिनत क्षतियां कारित कीं.... संजय ने कुल्हाड़ी से मेरी बाईं टांग पर दो-तीन प्रहार किए .... बिजेन्द्र ने कुल्हाड़ी से मेरे बाएं हाथ की हथेली पर एक प्रहार किया था ।" यहां यह उल्लेख किया जाना भी सुसंगत है कि शिकायतकर्ता ने अपनी प्रतिपरीक्षा में पर्याप्त स्पष्टता के साथ यह स्वीकार किया कि "जब अभियुक्त राजिन्द्र, हवा सिंह और बीरो घटनास्थल पर आए थे, मेरे शरीर पर सभी क्षतियां पहले ही कारित हो गई थीं ....[एवमेव]"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

5. प्रत्यक्षदर्शी साक्षी बलवान (अभि. सा. 3) ने शपथ पर यह कथन किया कि तारीख 25 जनवरी, 1998 को वह बुढ़ा वाला खेत की सिंचाई कर रहा था जिसे उसने पट्टे पर लिया था । लगभग 12.00 बजे अपराह्न में उसने रास्ते की तरफ से शोर आता हुआ सुना और उस दिशा में दौड़कर जाने के पश्चात् उसने देखा कि "ओम प्रकाश, रोहतास, संजय और बिजेन्द्र कुल्हाड़ियों से लैस होकर मेरे भाई/रणबीर को क्षतियां

कारित कर रहे थे ।" क्षतिग्रस्त-शिकायतकर्ता की तरह बलवान (अभि. सा. 3) ने भी हमले और इसके परिणामस्वरूप रणबीर के शरीर पर पहुंची क्षतियों के बारे में एक विस्तृत ब्यौरा दिया । उसके द्वारा घटना के देखे जाने की असंभाव्यता पर प्रतिरक्षा पक्ष की ओर से काउंसेलों द्वारा दिए गए प्रबल सुझावों के बावजूद, बलवान ने साफ-साफ यह उत्तर दिया कि "मैंने अभियुक्तों को मेरे भाई को क्षतियां कारित करते हुए लगभग आधा किल्ला की दूरी से देखा था .....।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

6. डा. सुमन माथुर (अभि. सा. 4), जिसने घटना के कुछ पश्चात् क्षतिग्रस्त का चिकित्सा-विधिक परीक्षण किया था, ने चिकित्सा संबंधी साक्ष्य दिया । उसे शिकायतकर्ता (अभि. सा. 1) के शरीर के विभिन्न अंगों पर निम्नलिखित सात क्षतियां पाई थीं :-

"1. दाईं तरफ नीचले एक तिहाई भाग पर 7 सें. मी. × 2 सें. मी. × हड्डी की गहराई तक विदीर्ण घाव । हड्डी से मांसपेशी दिखाई दे रही थी और नसें कुचल गई थीं । ताजा रक्तस्राव मौजूद था और एक्स-रे कराने का परामर्श दिया गया ।

2. दाएं पैर के टखने पर 3 सें. मी. × हड्डी की गहराई तक विदीर्ण घाव मौजूद । एक्स-रे कराने का परामर्श दिया गया ।

3. बाईं टांग के अग्र और मध्य भाग पर 3 सें. मी. × 2 सें. मी. × हड्डी की गहराई तक विदीर्ण घाव । बाईं टांग का एक्स-रे कराने का परामर्श दिया गया ।

4. बाईं टांग के पृष्ठ पर 3 सें. मी. × 2 से. मी. × मांसपेशी की गहराई तक विदीर्ण घाव ।

5. बाईं टांग के फलकीय भाग पर 3 सें. मी. × 3 सें. मी. × त्वचा की गहराई तक विदीर्ण घाव ।

6. बाईं पार्श्विक कनपटी पर बाएं कान से 5 सें. मी. ऊपर 5 सें. मी. × 2 सें. मी. × खोपड़ी की गहराई तक विदीर्ण घाव । एक्स-रे कराने का परामर्श दिया गया ।

7. दाईं पार्श्विक कनपटी पर 2 सें. मी. × 2 सें. मी. × खोपड़ी की गहराई तक विदीर्ण घाव । एक्स-रे कराने का परामर्श दिया गया ।"

7. डा. विजय गोयल (अभि. सा. 10), अस्थिरोग शल्य-चिकित्सक ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि जब उसने शिकायतकर्ता की परिचर्या की थी और उसकी दोनों टांगों की दोनों निचली हड्डियों का अस्थिभंग होने के साथ-साथ संवहिका और स्नायु की क्षतियां का निदान किया था, वह स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान संस्थान, रोहतक में अस्थि रोग विभाग, एक्स-रे और आपातकालीन खंड में रजिस्ट्रार के रूप में तैनात था । तारीख 26 जनवरी, 1998 को बाह्य द्विपार्श्विक टांगों को जोड़ा गया था और संवहिका संबंधी मरम्मत की गई थी । किन्तु शिकायतकर्ता की हालत बिगड़ने पर तारीख 1 फरवरी, 1998 को उसकी दाईं टांग के निचले भाग (घुटने से नीचे) का अंग विच्छेदन किया गया था । इस अंग विच्छेदन की आवश्यकता और अभियुक्तों द्वारा कारित की गई क्षतियों के आरंभिक समूह के साथ सह-संबंध को डा. एस. एस. लोचब (अभि. सा. 12) द्वारा स्पष्ट किया गया था, जो स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान संस्थान, रोहतक में हृदयवक्षी और हृदयवाहिका विभागाध्यक्ष के रूप में तैनात थे । उन्होंने अंतर्जंघिका धमनियों को पहुंची क्षति और कैसे अत्यधिक रक्त बह जाने से शिकायतकर्ता का जीवन खतरे में पड़ गया था, को स्पष्ट किया । अन्वेषक अधिकारी, उप निरीक्षक प्रकाश चंद (अभि. सा. 6) और अन्य औपचारिक साक्षियों ने भी अभियोजन पक्ष के पक्षकथन को सिद्ध करने के लिए अभिसाक्ष्य दिया ।

8. छह शेष अभियुक्तों ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में दंड प्रक्रिया संहिता) की धारा 313 के अधीन अपने कथन में यह दावा किया कि उन्हें स्थानीय गांव की राजनीति के कारण मिथ्या रूप से फंसाया गया है । उन्होंने प्रतिरक्षा में साक्ष्य भी दिया और डा. वर्षा (प्रति. सा. 1) को पेश किया जो उस समय चिकित्सा अधिकारी, सिविल अस्पताल, सोनीपत में तैनात थी, जिसने घटना के अगले दिन ओम प्रकाश (मृत) और संजय (वर्तमान अपीलार्थी) के शरीर पर चिकित्सा-विधिक परीक्षण के दौरान क्षतियां पाई थीं ।

9. विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश, सोनीपत ने पर्याप्त प्रत्यक्षदर्शी और चिकित्सीय साक्ष्य का विश्लेषण करने के पश्चात् अभि. सा. 3 के परिसाक्ष्य का अवलंब लेने के विरुद्ध प्रतिरक्षा पक्ष के इस आक्षेप को अस्वीकार कर दिया कि क्योंकि वह शिकायतकर्ता का नातेदार है और चिकित्सा साक्ष्य प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य से मेल नहीं खाता है । विचारण न्यायालय ने यह पाया कि एक सामान्य उद्देश्य के साथ एक 'विधि-विरुद्ध जमाव' ने शिकायतकर्ता को गंभीर क्षतियां कारित की थीं । परिणामतः, सभी छह अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 307 के अधीन अपराध के लिए (सात वर्ष के कठोर कारावास के दंडादेश के साथ) और भारतीय दंड संहिता की धारा 148 के अधीन भी (एक वर्ष के अतिरिक्त समवर्ती कारावास के साथ) दोषसिद्ध किया ।

10. अपील में उच्च न्यायालय ने संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन किया और शिकायतकर्ता की इस स्वीकारोक्ति पर भी विचार किया कि तीन अभियुक्त अर्थात् राजिन्द्र, हवा सिंह और बीरो **उर्फ** विरेन्द्र घटनास्थल पर उसे अन्य अभियुक्तों द्वारा पहले ही क्षतियां कारित कर देने के पश्चात् पहुंचे थे । उच्च न्यायालय ने इस संभाव्यता को महसूस करते हुए कि बाद में पहुंचने वाले अभियुक्तों को केवल जाल में फंसाने और पुरानी रंजिश निकालने के लिए नामित किया गया हो सकता है, राजिन्द्र, हवा सिंह और बीरो **उर्फ** विरेन्द्र को संदेह का फायदा दिया और उन्हें सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया । जहां तक वर्तमान तीन अपीलार्थियों रोहतास, संजय और बिजेन्द्र का संबंध है, उच्च न्यायालय ने उनकी दोषसिद्धि में हस्तक्षेप करने के लिए कोई कारण नहीं पाया, यद्यपि, भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के आरोप के अधीन दंडादेश की मात्रा को सात वर्ष से कम करके पांच वर्ष कर दिया और पीड़ित-शिकायतकर्ता (अभि. सा. 1) को संदत्त किए जाने के लिए 1,00,000/- रुपए (एक लाख रुपए) का संयुक्त रूप से अतिरिक्त जुर्माना अधिरोपित किया ।

11. इन तीन शेष सिद्धदोष व्यक्तियों अर्थात् रोहतास और संजय ने (संयुक्त रूप से) और बिजेन्द्र ने अपनी दोषसिद्धि और दंडादेश को इन दो दांडिक अपीलों के माध्यम से चुनौती दी है ।

दलीलें

12. हमने अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल को पर्याप्त विस्तार से सुना और अभिलेख का गहराई से परिशीलन किया । तीन मुख्य दलीलें हैं जो अपीलार्थियों की ओर से दी गई हैं । प्रथम, यह दलील दी गई कि 'विधिविरुद्ध जमाव' का गठन करने और सहवर्ती रूप से भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के अधीन कोई आरोप संधार्य करने के लिए अपेक्षित व्यक्तियों की न्यूनतम संख्या पांच है । इस बात को ध्यान में रखते हुए कि मूल सात अभियुक्तों में से तीन को उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया है, विधिविरुद्ध जमाव के भाग के रूप में हत्या के प्रयत्न के लिए दोषसिद्धि बची नहीं रह सकती थी । इसके समर्थन में अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल ने **अमर सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[1] और **धूपा चमार** बनाम **बिहार राज्य**[2] वाले मामलों का अवलंब लिया । इसके अतिरिक्त **सुबर्ण** बनाम **केरल राज्य**[3] वाले मामले का भी यह दलील देने के लिए अवलंब लिया गया कि मामले को अग्रवर्ती प्रक्रम पर पूर्णरूपेण भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन आने वाले मामले में संपरिवर्तित नहीं किया जाना चाहिए । द्वितीय, अभियोजन पक्ष का वृत्तांत अत्यंत संदेहास्पद था क्योंकि बलवान (अभि. सा. 3) एक हितबद्ध साक्षी था और किसी अन्य स्वतंत्र साक्षी की परीक्षा नहीं की गई थी । तृतीय और अंतिमत: आनुकल्पिक रूप से यह दलील दी गई कि अपीलार्थियों को उनके दंडादेश का कुछ भाग भुगत लेने के पश्चात् इस न्यायालय द्वारा लगभग एक दशक पूर्व जमानत पर छोड़ दिया गया था और इस प्रक्रम पर उन्हें कारागार में वापस भेजने से दांडिक न्याय के उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो जाएगी । अत: दंडादेश को अपीलार्थियों द्वारा पहले ही भुगत ली गई अवधि तक कम कर दिया जाना चाहिए ।

13. यद्यपि, राज्य की ओर से काउंसेल अंतिम सुनवाई की तारीख को हाजिर नहीं हुए, किंतु सुनवाई की आंतरायिक तारीखों पर प्रत्यर्थियों

---

[1] (1987) 1 एस. सी. सी. 679.

[2] (2002) 6 एस. सी. सी. 506.

[3] (1993) 3 एस. सी. सी. 32.

का आधार अपीलार्थियों के आधार से पूर्णतः विपरीत रहा । अभियोजन के पक्षकथन का यह आधार रहा है कि यह एक हत्या के प्रयत्न का मामला है जिसमें सामान्य आशय और पूर्विक मस्तिष्कों के मिलन के साथ सात व्यक्ति अंतर्वलित थे । राज्य का जोर बदस्तुर यह है कि क्षतियों की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए कोई नरम दृष्टिकोण नहीं अपनाया जाना चाहिए ।

विश्लेषण

14. हमने अपीलार्थियों की ओर से उठाए गए सभी विवाद्यकों पर गहराई से विचार किया है । हम पहले इस दलील का निवारण करना उचित समझते हैं कि क्या भारतीय दंड संहिता की धारा 149 की सहायता से विरचित किसी आरोप को बाद में भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित आरोप में परिवर्तित किया जा सकता है या यह पूर्णरूपेण एक व्यक्तिगत अपराध ही है ? दूसरा, क्या किसी हिंसक अपराध के स्वतंत्र साक्षी के अभाव में अभियोजन का पक्षकथन कमजोर हो जाएगा और क्या ऐसे दृष्टांतों में घनिष्ठ नातेदार साक्षियों के साक्ष्य का अवलंब लिया जा सकता है ? और तीसरा, क्या वर्तमान अपीलार्थियों की स्वछंदता की बढ़ाई गई अवधि को देखते हुए जिसका वे जमानत पर छोड़े जाने से लेकर उपभोग कर रहे हैं, उनके प्रति नरमी दिखाई जानी चाहिए ?

(i) आरोप विरचित किया जाना और इसमें बाद में परिवर्तन किया जाना

15. अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा उच्च न्यायालय के निर्णय पर किया गया प्राथमिक आक्षेप एक विधि के प्रश्न पर है जो यद्यपि पहली बार में रोचक प्रतीत होता है किंतु गहराई से विचार करने के उपरांत दिखावटी पाया गया । भारतीय दंड संहिता की धारा 148 और 149 के संबंध में चूक होना वास्तव में अवश्यम्भावी है जैसा कि अपीलार्थियों द्वारा उजागर किया गया है । इससे पूर्व कि 'विधिविरुद्ध जमाव' के सदस्यों को सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करते हुए कारित अपराध के लिए प्रतिनिधिक रूप से दोषी ठहराया जा सके, यह सिद्ध करना आवश्यक है कि पांच व्यक्तियों से अन्यून व्यक्तियों ने,

जैसा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 141 के साथ पठित धारा 149 के अधीन आज्ञापक रूप से विहित किया गया है, वास्तव में घटना में भाग लिया था । प्रस्तुत तथ्यों की तरह, यह असामान्य बात नहीं है कि जब यद्यपि आरोप-पत्रित करने के समय पर अभियुक्तों की संख्या पांच से अधिक है किंतु विचारण का अनुक्रम समाप्त होने पर उनमें से कुछ की दोषमुक्ति के कारण शेष अभियुक्तों की संख्या पांच से कम रह जाए । ऐसे मामलों में यह सही हो सकता है कि, जैसा कि अपीलार्थियों द्वारा ठीक ही आग्रह किया गया है, भारतीय दंड संहिता की धारा 148 और 149 के अधीन आरोप बना नहीं रहेगा ।

16. तथापि, इसका यह अर्थ नहीं है कि न्यायालय आरोप में परिवर्तन नहीं कर सकते हैं और भारतीय दंड संहिता की धारा 34 की सहायता (यदि सामान्य आशय है) नहीं ले सकते हैं या वे यह निर्धारित नहीं कर सकते हैं कि क्या अभियुक्त स्वतंत्र रूप से किसी विशिष्ट अपराध के संघटकों का समाधान करता है या नहीं । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 211 से 224 में, जो दांडिक विचारणों में आरोपों को विरचित करने के संबंध में है, न्यायालयों को आरोपों में परिवर्तन और सुधार करने का महत्वपूर्ण लचीलापन दिया गया है । परिवर्तन करने का विनिश्चय करते समय एकमात्र नियंत्रणकारी उद्देश्य यह है कि क्या नए आरोप से अभियुक्त पर प्रतिकूल प्रभाव तो नहीं पड़ेगा, अर्थात् क्या उसे इससे हैरानी तो नहीं होगी या क्या विलंबित परिवर्तन से उसकी प्रतिरक्षा रणनीति पर प्रभाव तो नहीं पड़ेगा । (**नल्लपा रेड्डी श्रीधर रेड्डी** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[1] वाला मामला देखें) । अत:, दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 17 का जोर प्रतिरक्षा पक्ष को पूरा और उचित अवसर देना है किंतु साथ-ही-साथ यह सुनिश्चित करना भी है कि मात्र तकनीकियों द्वारा न्याय विफल न हो । इसी प्रकार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 386 में अपील न्यायालय को भी ऐसे आरोपों में संशोधन करने की ऐसी व्यापक शक्तियां दी गई हैं जो पूर्वत्तर में गलत रूप से विरचित किए गए हो सकते हैं । इसके अतिरिक्त, अनुचित या आरोप विरचित ही न किया जाना दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 464 के अधीन स्वयंमेव

---

[1] 2020 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 60 = ए. आई. आर. 2020 एस. सी. 753.

दोषमुक्ति का आधार नहीं है । आवश्यक रूप से अवश्य यह दर्शित किया जाना चाहिए कि न्याय की हानि हुई है, उसी मामले में पुन: विचारण का आदेश किया जा सकता है । (**कांतिलाल चंदू लाल मेहता** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाला मामला देखें ।)

17. इसके प्रतिकूल अपीलार्थियों की दलील अति-तकनीकी होने के सिवाय कुछ नहीं है । यह उल्लेखनीय है कि **सुबर्ण** बनाम **केरला राज्य** (उपर्युक्त) वाले मामले के उद्धरणों को, जिनका अपीलार्थियों के काउंसेल द्वारा अवलंब लिया गया है, न्यायपीठ द्वारा बाद में न्यायिक पुनर्विलोकन में प्रत्याहृत और प्रतिस्थापित कर दिया गया था । संशोधित व्याख्या से यह स्पष्ट होता है कि **सुवर्ण** (उपर्युक्त) वाले मामले में दोषमुक्ति का कारण आरोपों को अनुचित रूप से विरचित करना नहीं था अपितु तथ्यों के आधार पर की गई थी । उस मामले में, जब अभियुक्त की भूमिका का व्यक्तिगत तौर पर निर्धारण किया गया था तो उसके द्वारा पहुंचाई गई क्षतियों के आरोप से सुसंगत उपबंध के आवश्यक संघटकों का समाधान नहीं हुआ था । वास्तव में, यही सही दृष्टिकोण है । न्यायालय साक्ष्य पर यह विचार करने और अवधारण करने के लिए स्वतंत्र है कि यदि भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के अधीन सामूहिक अभियोजन असफल रहता है तो क्या व्यक्तिगत रूप से दोषसिद्ध करना संभव है ।

18. अपीलार्थियों द्वारा अवलंब लिए गए एक अन्य मामले अर्थात् **अमर सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने पूर्वान्तिम पैरा में यह उल्लेख किया कि "इस तथ्य के अतिरिक्त कि अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 148 और 149 के अधीन दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता है, उन्हें अभि. सा. 15 के साक्ष्य के आधार पर किसी आरोप के लिए दोषसिद्ध करना मुश्किल है ।" इससे यह दर्शित होता है कि दोषमुक्ति न केवल अभियोजन पक्ष द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 148 की अपेक्षाओं को पूरा करने में असफल रहने पर आधारित थी अपितु क्योंकि व्यक्तिगत रूप से भी कोई सारभूत अपराध किया गया नहीं पाया गया था ।

---

[1] (1969) 3 एस. सी. सी. 166.

19. वास्तव में, इस मुद्दे पर विधि पर इस न्यायालय द्वारा समय-समय पर गहराई से विचार किया गया है और इसे दोहराया गया है । **करनैल सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया था :–

> "8. यह सही है कि दोनों धाराओं के बीच सारभूत भिन्नता है किंतु जैसा कि लार्ड सुमनेर द्वारा बरेन्द्र कुमार घोष **बनाम** एम्परर (आई. एल. आर. 52 कलकत्ता 197) वाले मामले में मत व्यक्त किया गया है, वे कुछ सीमा तक परस्परव्यापि भी हैं और यह प्रत्येक मामले के तथ्यों के आधार पर अवधारित किया जाने वाला प्रश्न है कि क्या धारा 149 के अधीन आरोप धारा 34 के अंतर्गत आने वाले आधार को अतिव्याप्त करता है या नहीं । यदि सामान्य उद्देश्य में, जो धारा 149 के अधीन आरोप की विषयवस्तु है, आवश्यक रूप से सामान्य आशय अंतर्वलित नहीं होता है, तब धारा 149 के स्थान पर धारा 34 के प्रतिस्थापन्न के परिणामस्वरूप अभियुक्त पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है और इसलिए इसकी अनुज्ञा नहीं दी जानी चाहिए ।
>
> किन्तु यदि धारा 149 के अधीन आरोप के संबंध में साबित किए जाने वाले तथ्य और प्रस्तुत किया जाने वाला साक्ष्य वही हों, यदि आरोप धारा 34 के अधीन होता, तब अभियुक्त को धारा 34 के अधीन आरोपित करने में असफलता के परिणामस्वरूप कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड सकता है और ऐसे मामलों में धारा 149 के स्थान पर धारा 34 के प्रतिस्थापन्न को अवश्य एक औपचारिक बात होना अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए ।
>
> (बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

20. ऊपर उद्धृत विधि की स्थिति को **विल्ली (विलियम) स्लाने** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[2] वाले मामले में और **चित्तरमल** बनाम **राजस्थान राज्य**[3] वाले मामले में बहुमत द्वारा भी पुष्टि की गई थी ।

---

[1] ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 204.

[2] ए. आई. आर. 1956 एस. सी. 116.

[3] (2003) 2 एस. सी. सी. 266.

किसी अभियुक्त की भारतीय दंड संहिता की धारा 149 की सहायता से सामूहिक दोषसिद्धि करने में असफल रहने के पश्चात् उसे व्यक्तिगत रूप से एक पूर्णरुपेण उपबंध के अधीन दोषसिद्ध करने की अनुज्ञेयता की गवेषणा **आत्माराम जिंगाराजी** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में भी की गई थी, जिसमें इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि :-

> "4. अगला प्रश्न जो हमारे विचार के लिए उद्भूत होता है, यह है कि क्या सभी अन्य अभियुक्तों की दोषमुक्ति की अभिपुष्टि करने के पश्चात् उच्च न्यायालय अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 (पूर्णरूपेण) के अधीन दोषसिद्ध कर सकता था । अभियुक्त (पूर्वत्तर उद्धृत) के विरुद्ध विरचित किए गए आरोपों और उन्हें सिद्ध करने के लिए अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य से स्पष्ट रूप से यह उपदर्शित होता है कि उसके पक्षकथन के अनुसार, विचारण न्यायालय के समक्ष नौ व्यक्तियों पर अभियोजन लगाया गया था और किन्हीं अन्य, नामित या अनामित व्यक्तियों ने (कुल मिलाकर न्यूनतम पांच या अधिक व्यक्तियों ने) विधिविरुद्ध जमाव का गठन नहीं किया था । अन्य आठ व्यक्तियों की दोषमुक्ति के परिणामस्वरूप अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 149 की सहायता से दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता था, विशिष्ट रूप से, विद्वान् निचले न्यायालयों के इन समवर्ती निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए कि अन्य आठ व्यक्ति किसी भी प्रकार से प्रश्नगत अपराधों में अंतर्ग्रस्त नहीं थे ।
>
> 5. यही सिद्धांत तब भी लागू होगा जब व्यक्तियों का विचारण भारतीय दंड संहिता की धारा 34 की सहायता से किया जाता है । कृष्णा **बनाम** महराष्ट्र राज्य [(1964) 1 एस. सी. आर. 678] वाले मामले में इस न्यायालय के चार न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने यह अधिकथित किया था कि जब चार अभियुक्त व्यक्तियों का विचारण इस विनिर्दिष्ट अभियोग के आधार पर किया जाता है कि केवल उन्होंने अपने सामान्य आशय को अग्रसर करते हुए हत्या कारित की थी और उनमें से तीन दोषमुक्त कर दिए जाते हैं तो

---

[1] (1997) 7 एस. सी. सी. 41.

चौथे अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 की सहायता से दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता है क्योंकि विधि का प्रभाव यह होगा कि जो व्यक्ति उसके साथ थे उन्होंने हत्या कारित करने में चौथे अभियुक्त के साथ संयुक्त रूप से कार्य नहीं किया था ।

6. अत:, उपरोक्त दोनों स्थितियों में से किसी भी स्थिति में एकमात्र दोषसिद्ध व्यक्ति को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 (पूर्णरूपेण) के अधीन केवल इस तथ्य के सबूत के आधार पर दोषसिद्ध किया जा सकता है कि उसके व्यक्तिगत कृत्य से विपदग्रस्त की मृत्यु कारित हुई थी । दूसरे शब्दों में, वह केवल अपने स्वयं के कृत्य के लिए दायी होगा । प्रस्तुत मामले में, अभिलेख पर के साक्ष्य से यह साबित नहीं होता है कि अकेले अपीलार्थी द्वारा पहुंचाई गई क्षतियों से मृत्यु कारित हुई थी ; इसके विपरीत, प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य से और डाक्टर, जिसने मरणोत्तर पीरक्षा की थी, के साक्ष्य से यह उपदर्शित होता है कि मृतक को अन्य आयुधों से भी क्षतियां पहुंची थीं और सभी क्षतियों के परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हई थी । अत:, अपीलार्थी भारतीय दंड संहिता की धारा 326 के अधीन अपराध का दोषी होगा क्योंकि उसने मृतक को जांबिया (एक धारदार-काटने वाला औजार) की सहायता से गंभीर क्षतियां कारित की थीं ।"

(बले देने के लिए रेखांकन किया गया है)

21. विधि की स्थिति को अंतत: **नल्लाबोथु वेंकय्या** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में अति संक्षिप्त और स्पष्ट रूप से दोहराया गया है :–

"24. इस न्यायालय के अनेक विनिश्चयों का विश्लेषणात्मक अनुशीलन करने पर विधि की निम्नलिखित व्यापक प्रतिपादना स्पष्ट रूप से प्रकट होती है ; (क) धारा 149 की सहायता के बिना पूर्णरुपेण धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि तब अनुज्ञेय है यदि जिस स्पष्ट कृत्य का अभियोग अभियुक्त पर लगाया गया है और

---

[1] (2002) 7 एस. सी. सी. 117.

जिसके परिणामस्वरूप ऐसी घातक क्षति कारित हुई जो मृतक की मृत्यु कारित करने के लिए प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में स्वतंत्र रूप से पर्याप्त हैं और चिकित्सा साक्ष्य से उसका समर्थन होता है ; (ख) उच्च न्यायालय द्वारा अभिलिखित की गई गलत दोषमुक्ति, भले ही यह बनी रहे, तो भी यह परिस्थिति भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि में बाधा नहीं बनेगी ; (ग) धारा 149 की सहायता से धारा 302 के अधीन आरोप को धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन आरोप में वहां परिवर्तित किया जा सकता है यदि यह साबित हो जाता है कि पांच से कम कई व्यक्तियों द्वारा किया गया आपराधिक कृत्य सामान्य आशय को अग्रसर करते हुए किया गया था ।"

(बले देने के लिए रेखांकन किया गया है)

22. यद्यपि भारतीय दंड संहिता की धारा 34 और 149 दोनों ही किसी समूह के सदस्यों पर व्यक्तिगत प्रतिनिधिक दायित्व का प्रभाजन करने के ढंग हैं, तो भी इन दोंनों उपबंधों के बीच कुछ महत्वपूर्ण भिन्नता विद्यमान है । धारा 34 के लिए सक्रिय भागीदारी और पहले से मस्तिष्कों का मिलन होना अपेक्षित है जबकि धारा 149 में विधिविरुद्ध जमाव का मात्र सदस्य होने पर दायित्व डाला गया है । वास्तव में, ऐसे 'सामान्य आशय' का निष्कर्ष प्रायिक तौर पर अप्रत्यक्ष रूप से अलग-अलग व्यक्तियों के आचरण से निकाला जाता है और केवल कभी-कभार यह निष्कर्ष प्रत्यक्ष साक्ष्य के माध्यम से निकाला जाता है । (**महबूब शाह** बनाम **किंग एम्परर**[1] वाला मामला देखें) ।

23. प्रस्तुत मामले के तथ्यों को ये स्थिर सिद्धांत लागू करते हुए, यह देखा जा सकता है कि उसी साक्ष्य से ही अर्थात् अभियुक्तों के आचरण से, जैसा कि क्षतिग्रस्त और प्रत्यक्षदर्शी साक्षी द्वारा वर्णन किया गया है, सामान्य उद्देश्य और सामान्य आशय दोनों होने का पता चलता है । इसके अतिरिक्त, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन

---

[1] ए. आई. आर. 1945 प्रिवी कौंसिल 118.

किए गए कथन का परिशीलन करने पर यह दर्शित होता है कि अपीलार्थियों के समक्ष अभिव्यक्त रूप से अपराध में उनकी अपनी-अपनी विनिर्दिष्ट भूमिका का उल्लेख किया गया था ; यह कि उनमें से प्रत्येक ने क्षतिग्रस्त की हत्या करने के सामान्य आशय को अग्रसर करते हुए शिकायतकर्ता पर घातक आयुध से आक्रमण किया था । अत: हम नहीं पाते कि अपीलार्थियों पर तब कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था जब उच्च न्यायालय ने उन तीनों को व्यक्तिगत रूप से हत्या का प्रयत्न करने के अपराध के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 149 की सहातया के बिना दोषी अभिनिर्धारित किया था ।

24. हमें कोई संदेह नहीं है कि तथ्यों के आधार पर तीनों अपीलार्थियों में से प्रत्येक के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध को स्पष्ट रूप से सिद्ध किया गया है । चिकित्सा विशेषज्ञों ने अपने अभिसाक्ष्यों में स्पष्ट रूप से यह कथन किया है कि प्रयुक्त किए गए आयुध और पहुंचाई गई क्षतियां प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थीं । अपीलार्थियों ने तारीख 24 जनवरी, 1998 को शिकायतकर्ता को जान से मारने की धमकी दी थी और फिर अगले ही दिन उन्होंने धारदार आयुधों का प्रयोग किया तथा यह भी घोषणा की थी कि वे शिकायतकर्ता को जान से मारने तक चैन नहीं लेंगे । इससे अपीलार्थियों का पूरी तरह से यह जानते हुए ऐसी क्षतियां पहुंचाने का आशय स्पष्ट होता है कि ऐसी क्षतियों से सामान्य तौर पर शिकायतकर्ता की मृत्यु हो जाएगी । रोहतास से की गई कुल्हाड़ी की बरामदगी, जो अभिलेख पर प्रदर्श पी-7 के रूप में है, से भी अपीलार्थियों द्वारा घटना कारित करने से इनकारी की बात कमजोर हो जाती है ।

25. क्षतिया गंभीर होने की बात संदेह के परे हैं । न केवल सात क्षतियां थीं, उनमें से कुछ तो सिर (कान के ऊपर) सहित शरीर के मार्मिक अंगों पर गहराई तक कटने की क्षतियां थी ; अपितु अपीलार्थियों ने शिकायतकर्ता के पैरों की घुटने की नीचे की सभी हड्डियां तोड़ दी थीं । अत्यधिक विस्मयकारी बात तो यह है कि क्षतियों के कारण शिकायतकर्ता के ये संपूर्ण अंग काटने पड़े थे जिससे वह स्थायी रूप से

निर्योग्य हो गया था । स्वयं इस बात से यह दर्शित होता है कि यदि अभि. सा. 3 द्वारा समय पर हस्तक्षेप न किया गया होता और स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान संस्थान, रोहतक द्वारा उचित चिकित्सा देख-रेख न की गई होती तो शिकायतकर्ता की मृत्यु होने की अत्यधिक संभावना थी । ऐसी अत्यधिक क्षतियों को देखते हुए, हमें ऐसा कोई कारण या वजह समझ नहीं आती कि या तो शिकायतकर्ता (अभि. सा. 1) या उसके भाई बलवान (अभि. सा. 3) द्वारा अपीलार्थियों को मिथ्या रूप से फंसाया गया हो और वास्तविक अपराधियों को बचकर जाने दिया गया हो । इसके विपरीत, अभि. सा. 1 की स्पष्टवादिता और अभि. सा. 3 के उत्तर विश्वासोत्पादक हैं और इनसे घटना का असंदिग्ध स्पष्टीकरण उपलब्ध होता है ।

26. इसके अतिरिक्त, यहां तक कि भारतीय दंड संहिता की धारा 34 की अपेक्षाएं भी भली-भांति सिद्ध होती हैं क्योंकि आक्रमण स्पष्ट रूप से पूर्व-चिंतन करके किया गया था । घटना तत्क्षण घटित नहीं हुई थी । अपीलार्थियों ने पहले ही शिकायतकर्ता को यह धमकी दी थी कि यदि उसे अपने खेतों की सिचाईं करने का प्रयत्न किया तो उसे शारीरिक हानि पहुंचाई जाएगी । इस प्रकार तारीख 25 जनवरी, 1998 का उनका आक्रमण पूर्व-योजनाबद्ध और सुविचारित था । अभिलेख पर यह सुझाव देने के लिए कुछ नहीं है कि शिकायतकर्ता ने कोई प्रकोपन दिया था । क्षतिग्रस्त द्वारा और एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी द्वारा प्रत्येक अपीलार्थी द्वारा निभाई गई भूमिका के बारे में कथन किया है और अपराध में उनकी व्यक्तिगत सक्रिय भागीदारी को सिद्ध किया है ।

ii साक्षियों की स्वतंत्रता

27. यह सही है कि अभियोजन पक्ष का कर्तव्य न्यायसंगत दोषसिद्धि की ईप्सा करना ही नहीं अपितु यह सुनिश्चित करना भी है कि न्याय किया जाए । (**कुमारी श्रीलेखा विद्यार्थी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] वाला मामला देखें) । अत: अभियोजन पक्ष को अवश्य अन्वेषण के अनुक्रम में एकत्रित सर्वोत्तम साक्ष्य प्रस्तुत करना चाहिए । यद्यपि

---

[1] (1991) 1 एस. सी. सी. 212.

सदैव आदर्श बात यह है कि अभियोजन के पक्षकथन को सिद्ध करने के लिए स्वतंत्र साक्षियों को आगे आना चाहिए किंतु प्रत्येक मामले में घटना के समय पर पर-व्यक्तियों की मौजूदगी की प्रत्याशा करना अनुचित होगा । क्योंकि अधिकांश हिंसात्मक अपराध यदा-कदा पूर्वानुमानित होते हैं । अतः, स्वतंत्र साक्षियों की परीक्षा न कराने के विरुद्ध निकाले गए किसी प्रतिकूल निष्कर्ष का निर्धारण प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर किए जाने की आवश्यकता है । वास्तव में, पहले अवश्य यह अवधारित किया जाना चाहिए कि क्या अभियोजन पक्ष द्वारा सर्वोत्तम साक्ष्य को, यद्यपि उपलब्ध था, अस्पष्ट या अस्पष्टीकृत कारणों से वास्तव में विधारित कर लिया गया था ।

28. प्रस्तुत अपराध एक प्राइवेट कृषि खेत में घटित हुआ था । न कि एक व्यस्त सार्वजनिक स्थान के बीचों-बीच घटित हुआ था । प्रतिरक्षा पक्ष ने यह दावा नहीं किया है कि अन्य किसान भी घटनास्थल पर इकट्ठा हो गए थे और फिर भी उनकी परीक्षा नहीं की गई थी । इससे यह दर्शित होता है कि वास्तव में अपीलार्थियों के तर्क ढुलमूल रहे हैं । विचारण में पहले उन्होंने अभि. सा. 3 के प्रत्यक्षदर्शी परिसाक्ष्य को यह दावा करते हुए अविश्वसनीय ठहराने की कोशिश की कि वह खेतों में खड़ी फसलों के कारण शायद घटना नहीं देख सकता था । बहरहाल, उन्होंने इस न्यायालय से यह विश्वास करने की प्रत्याशा की कि अन्य व्यक्ति हो सकते थे जिन्होंने घटना देखी हो किंतु अभियोजन पक्ष द्वारा इस बात को जानबूझकर छिपाया गया हो ।

iii दंडादेश और नरमी

29. अब हमारे लिए साम्यापूर्ण बातों और दंडादेशों में पारिणामिक कमी करने, जैसा कि अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा अभिवाक् किया गया है, के अभिवाक् की छानबीन करना शेष रह जाता है । हमने इस प्रार्थना पर वस्तुनिष्ठ रूप से विचार किया है । तथापि, हम इस तथ्य की उपेक्षा नहीं कर सकते हैं कि अपीलार्थी और उनका मृत सह-अभियुक्त सभी घातक आयुधों से लैस थे । उन्होंने शिकायतकर्ता को घेर लिया और एक नृशंस आक्रमण करके उसे भयानक क्षतियां कारित की और उसे जीवनभर के लिए निर्योग्य बना दिया ।

30. अपीलार्थियों ने अपने दंडादेश का आधा भी नहीं भुगता है । अपने जीवन के अधिकतर उपयोगी भाग का कारागार के बाहर उपभोग करने की बात को स्वयमेव एक शमनकारी कारक के रूप में नहीं लिया जा सकता है । अपीलार्थियों के प्रति किसी अनुचित सहानुभूति से अपराध के पीड़ित व्यक्ति के साथ अन्याय कारित होना संभाव्य है । अत: हम नरमी दिखाने और दंडादेश में कमी करने के लिए कोई औचित्य नहीं पाते हैं ।

31. इस बात को ध्यान में रखते हुए कि पहले अपीलार्थियों को धारा 307 के अधीन पांच वर्ष और धारा 148 के अधीन एक वर्ष के दोनों दंडादेशों को साथ-साथ भुगतने का आदेश दिया गया था, पश्चात्वर्ती दंडादेश में दोषमुक्ति से उनके दंडादेश की शेष अवधि पर प्रभावी रूप से कोई असर नहीं पड़ेगा ।

निष्कर्ष

32. उपरोक्त चर्चा के परिणामस्वरूप दोनों अपीलें, जहां तक इनका संबंध अपीलार्थियों की भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन दोषसिद्धि से है, किसी गुणागुण के बिना पाई गई हैं और तद्नुसार खारिज की जाती है । तथापि, भारतीय दंड संहिता की धारा 148 के अधीन उनकी दोषसिद्धि अपास्त की जाती है । उनके जमानत बंधपत्र रद्द किए जाते हैं और हरियाणा राज्य को निदेश दिया जाता है कि अपीलार्थियों को उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए उनके पांच वर्ष के दंडादेश की शेष अवधि को भुगतने के लिए अभिरक्षा में लिया जाए ।

अपीलें खारिज की गईं ।

जस.